भगत सिंह

जन्म	:	28 सितंबर 1907 ।
शहादत	:	23 मार्च 1931 (शाम 7:33 मिनट पर 'लाहौर षड्यंत्र केस में फाँसी) ।
जन्म-स्थान	:	बंगा चक्क, न० 105, गुगैरा ब्राँच, वर्तमान लावलपुर (पाकिस्तान) ।
पैतृक गाँव	:	खटकड़कलाँ, पंजाब ।
माता-पिता	:	विद्यावती एवं सरदार किशन सिंह ।
परिवार	:	संपूर्ण परिवार स्वाधीनता सेनानी । पिता और चाचा अजीत सिंह लाला लाजपत राय के सहयोगी । अजीत सिंह को मांडले जेल में देश निकाला दिया गया था । बाद में विदेशों में जाकर मुक्तिसंग्राम का संचालन करने लगे । छोटे चाचा सरदार स्वर्ण सिंह भी जेल गए और जेल की यातनाओं के कारण 1910 में उनका निधन हुआ । भगत सिंह की शहादत के बाद उनके भाई कुलबीर सिंह और कुलतार सिंह को देवली कैंप जेल में रखा गया था जहाँ वे 1946 तक रहे । पिता अनेक बार जेल गए ।
शिक्षा	:	पहले चार साल की प्राइमरी शिक्षा अपने गाँव बंगा में । फिर लाहौर के डी० ए० वी० स्कूल से वर्ग नौ तक की पढ़ाई की । बाद में नेशनल कॉलेज, लाहौर से एफ० ए० किया, बी० ए० के दौरान पढ़ाई छोड़ दी और क्रांतिकारी दल में शामिल हो गए ।
प्रभाव	:	बचपन में करतार सिंह सराभा और 1914 के गदर पार्टी के आंदोलन के प्रति तीव्र आकर्षण । सराभा की निर्भीक कुर्बानी का मन पर स्थाई और गहरा असर । 16 नवंबर 1915 को सराभा की फाँसी के समय भगत सिंह की उम्र 8 वर्ष थी । वे सराभा का चित्र अपनी जेब ही में रखते थे ।
गतिविधियाँ	:	12 वर्ष की उम्र में जलियाँवाला बाग की मिट्टी लेकर क्रांतिकारी गतिविधियों की शुरुआत । 1922 में चौराचौरी कांड के बाद 15 वर्ष की उम्र में काँग्रेस और महात्मा गाँधी से मोहभंग । 1923 में पढ़ाई और घर छोड़कर कानपुर, गणेश शंकर विद्यार्थी के पत्र 'प्रताप' में सेवाएँ दीं । 1926 में अपने नेतृत्व में पंजाब में 'नौजवान भारत सभा' का गठन किया जिसकी शाखाएँ विभिन्न शहरों में स्थापित की गईं । 1928 से 31 तक चंद्रशेखर आजाद के साथ मिलकर 'हिंदुस्तान समाजवादी प्रजातांत्रिक संघ' का गठन किया और क्रांतिकारी आंदोलन सघन रूप से छेड़ दिया । 8 अप्रैल 1929 को बटुकेश्वर दत्त और राजगुरु के साथ केंद्रीय असेंबली में बम फेंका और गिरफ्तार हुए ।
पहली गिरफ्तारी	:	अक्टूबर 1926 में दशहरा मेले में हुए बम विस्फोट के कारण मई 1927 में हुई ।
कृतियाँ	:	पंजाब की भाषा तथा लिपि की समस्या (हिंदी में 1924), विश्वप्रेम (कलकत्ता के मतवाला में 1924 में प्रकाशित हिंदी लेख), 'युवक' (मतवाला में 1924 में प्रकाशित हिंदी लेख), मैं नास्तिक क्यों हूँ (1930-31), अछूत समस्या, विद्यार्थी और राजनीति, सत्याग्रह और हड़तालें, बम का दर्शन, भारतीय क्रांति का आदर्श आदि अनेक लेख, टिप्पणियाँ एवं पत्र जो अलग-अलग प्रकाशकों द्वारा भगत सिंह के दस्तावेज के रूप में प्रकाशित । शचींद्रनाथ सान्याल की पुस्तक 'बंदी जीवन' और 'डॉन ब्रॉन की आत्मकथा' का अनुवाद । जेल डायरी

भी लिखी और निम्नांकित चार पुस्तकें भगत सिंह के द्वारा लिखी बताई जाती हैं जो अप्राप्य हैं - समाजवाद का आदर्श, आत्मकथा, भारत में क्रांतिकारी आंदोलन का इतिहास और मौत के दरवाजे पर ।

अमर शहीद भगतसिंह आधुनिक भारतीय इतिहास की एक पवित्र स्मृति हैं । भारत राष्ट्र के लोकमानस में उनकी युवा छवि अमिट होकर बस गई है । देश की स्वतंत्रता के लिए अपने प्राणों का बलिदान कर देनेवाले हजारों लोगों तथा लाखों स्वाधीनता सेनानियों की प्रेरणा और उत्सर्गपूर्ण कार्यों के वे स्थाई प्रतीक और प्रतिनिधि हैं । उनके कार्यों और उनके बलिदान ने जनता के हृदय में सदा सुलगती रहनेवाली राष्ट्रीयता की ज्योतिर्मयी चेतना का निर्माण किया है । राष्ट्रीयता, देशभक्ति, क्रांति और युवाशक्ति के वे प्रेरणापुंज प्रतीक हैं । यह अमर पद उन्होंने लगभग तेईस वर्षों में ही हासिल कर लिया था ।

स्वाधीनता सेनानियों के परिवार में जन्म पाकर उन्होंने बचपन में ही देश की स्वतंत्रता के लिए मर-मिटने का अविस्मरणीय पाठ पढ़ लिया था । उनके भीतर इच्छा, संकल्प, विचार और कर्म की सुदृढ़, अजेय और अमोघ शक्ति थी--बचपन से लेकर उठान की युवावस्था की शहादत तक का उनका इतिहास यही साबित करता है । देश और जनता की स्वतंत्रता के लिए अपराजेय संघर्ष तथा सामाजिक समानता, न्याय और सबकी खुशहाली पर टिकी समाजव्यवस्था के लिए क्रांति के स्वप्न के रूप में उन्हें ऐसा कुछ प्राप्त हो गया था जिसके आगे मृत्यु बहुत छोटी और तुच्छ पड़ गई । नश्वर जीवन के इस महिमामय मूल्यबोध के चलते ही उन्होंने हँसते-हँसते फाँसी का फंदा अपने गले लगा लिया और झूल गए । सचमुच वे उस पथ पर बढ़े, जिसके आगे राह नहीं थी ।

भगत सिंह का विकास आरंभ से ही उद्देश्य के प्रति समर्पित एक प्रबुद्ध नौजवान के रूप में हुआ । लाहौर में छात्र जीवन में ही उनका संग-साथ अपने ही जैसे लक्ष्यनिष्ठ जागरूक युवकों से हो गया था । इनमें अनेक आगे चलकर उनके साथी क्रांतिकारी बने । एक जागरूक छात्र के रूप में उनकी दृष्टि देश-दुनिया की हलचलों और गतिविधियों पर हमेशा बनी रही । अपनी रुचि की पुस्तकें जिनमें साहित्य, राजनीति, दर्शन, इतिहास आदि विषयों की पुस्तकें हुआ करती थीं, उन्होंने खूब पढ़ी थीं, और उनसे प्राप्त ज्ञान के प्रकाश में अपने देश-समाज आदि के बारे में सोच-विचार करते रहते थे । उनकी मानसिक जागरूकता, सोच-विचार और प्रबुद्धता ही वह कारण थी कि घर छोड़ने के बाद वे कानपुर में गणेश शंकर विद्यार्थी के पास चले आए और वहाँ उनके पत्र 'प्रताप' को अपनी सेवाएँ दीं । उन्होंने विभिन्न महत्त्वपूर्ण विषयों पर लगातार लेख लिखे और उनमें से अनेक पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित करवाए । एक चिंतक-विचारक के रूप में वे समाजवाद और मार्क्स-एंगेल्स की विचारधारा से लगातार प्रभावित और अनुप्राणित होते रहे । क्रांति और समाज व्यवस्था को लेकर उनकी सोच इन विचारकों से प्रभावित थी । सामाजिक-राजनीतिक चिंतन और विचार के धरातल पर वे अपने समकालीनों से प्रायः आगे दिखाई पड़ते हैं ।

बहुधा आज सयाने और अभिभावकीय दृष्टिकोण वाले लोग यह राय प्रकट करते दिखाई पड़ते हैं कि छात्रों को राजनीति से अलग रहना चाहिए । उनका काम पढ़ाई करना और अपनी योग्यता बढ़ाना है, राजनीति में उलझना नहीं । गोया राजनीति का पढ़ाई से कोई स्थाई वैर-विरोध हो । छात्र और युवा भगतसिंह के विचार इस संबंध में क्या हैं, वे इस बारे में क्या सोचते थे ? इसकी झलक यहाँ भगत सिंह के छोटे से निबंध में मिलती है । यह सही है कि उन दिनों स्वाधीनता आंदोलन चल रहा था जिससे गाफिल और असंपृक्त नहीं रहा जा सकता था । इसलिए तत्कालीन राजनीति में छात्रों की रुचि और भागीदारी वांछित तथा अपरिहार्य थी । किंतु आज ? आज क्या आजादी के संपूर्ण लक्ष्य हासिल कर लिए गए हैं ? समाज में गैर-बराबरी, भेदभाव, अशिक्षा, अंधविश्वास, गरीबी, अन्याय आदि दुर्गुण एवं अभाव अभी भी जमे हुए हैं; सांस्कृतिक स्वाधीनता का लक्ष्य अभी भी दूर दिखाई पड़ता है; बेहतर मानवीय व्यवस्था के लिए आज भी राजनीतिक संघर्ष जारी है । ऐसे समय में भगतसिंह का यह लेख छात्रों के लिए उतना ही प्रासंगिक है ।

दूसरे, और अपेक्षाकृत अंतरंग पाठ के रूप में, यहाँ अपने घनिष्ठ क्रांतिकारी मित्र सुखदेव के नाम भगत सिंह का ऐतिहासिक पत्र प्रस्तुत है । क्रांतिकारी भी मनुष्य होते हैं, जिनके पास भावनाएँ और विचार होते हैं, उनके मन होता है, जिसमें कई तरह की उधेड़बुन चलती रहती है । उनके मानसिक जीवन में अनेक उतार-चढ़ाव आते हैं, संकल्प-विकल्प से भरे अनेक सबल और दुर्बल क्षण आते हैं । इन सबको देखते-समझते हुए उन्हें अपने उद्देश्य और लक्ष्य के प्रति निष्ठा और विश्वास को बनाए-बचाए रखना होता है । भगतसिंह और चंद्रशेखर आजाद के नेतृत्व में क्रांतिकारियों का संगठन काम कर रहा था । अपने साथियों के साथ लगातार अंतरंग संवाद कायम रखकर ही वे सच्चे अर्थों में उनसे अपनी मैत्री निभा सकते थे तथा जरूरी क्षणों में उनकी सहेज-सँभाल रख सकते थे । इस पत्र से भगतसिंह और सुखदेव के बीच के अंतरंग संवाद की एक शिक्षाप्रद झलक मिलती है ।

♦ ♦ ♦

स्वतंत्रता

वे मृत शरीर नवयुवकों के,
वे शहीद जो झूल गए फाँसी के फंदे से –
वे दिल जो छलनी हो गए भूरे सीसे से,
सर्द और निष्पंद जो वे लगते हैं, जीवित हैं और कहीं
अबाधित ओज के साथ
वे जीवित हैं अन्य युवाजन में, ओ राजाओ !
वे जीवित हैं अन्य बंधु-जन में, फिर से तुम्हें चुनौती देने को तैयार
वे पवित्र हो गए मृत्यु से–
शिक्षित और समुन्नत ।
दफन न होते आजादी पर मरने वाले
पैदा करते हैं मुक्ति-बीज, फिर और बीज पैदा करने को ।
जिसे ले जाती दूर हवा और फिर बोती है और जिसे
पोषित करते हैं वर्षा और जल हिम ।
देहमुक्त जो हुई आत्मा उसे न कर सकते विच्छिन्न
अस्त्र-शस्त्र अत्याचारी के
बल्कि हो अजेय रमती धरती पर, मर मर करती,
बतियाती, चौकस करती ।

– वाल्ट ह्विटमैन
(भगत सिंह द्वारा डायरी में उद्धृत)

एक लेख और एक पत्र

विद्यार्थी और राजनीति

इस बात का बड़ा भारी शोर सुना जा रहा है कि पढ़ने वाले नौजवान (विद्यार्थी) राजनीतिक या पॉलिटिकल कामों में हिस्सा न लें । पंजाब सरकार की राय बिलकुल ही न्यारी है । विद्यार्थियों से कॉलेज में दाखिल होने से पहले इस आशय की शर्त पर हस्ताक्षर करवाए जाते हैं कि वे पॉलिटिकल कामों में हिस्सा नहीं लेंगे । आगे हमारा दुर्भाग्य कि लोगों की ओर से चुना हुआ मनोहर, जो अब शिक्षा मंत्री है, स्कूलों-कॉलेजों के नाम एक सर्कुलर या परिपत्र भेजता है कि कोई पढ़ने या पढ़ाने वाला पॉलिटिक्स में हिस्सा न ले । कुछ दिन हुए जब लाहौर में स्टूडेंट्स यूनियन या विद्यार्थी सभा की ओर से विद्यार्थी सप्ताह मनाया जा रहा था । वहाँ भी सर अब्दुल कादर और प्रोफेसर ईश्वरचंद्र नंदा ने इस बात पर जोर दिया कि विद्यार्थियों को पॉलिटिक्स में हिस्सा नहीं लेना चाहिए ।

पंजाब को राजनीतिक जीवन में सबसे पिछड़ा हुआ कहा जाता है । इसका क्या कारण है ? क्या पंजाब ने बलिदान कम दिए हैं ? इसका कारण स्पष्ट है कि हमारे शिक्षा विभाग के अधिकारी लोग बिलकुल ही बुद्धू हैं । आज पंजाब कौंसिल की कार्रवाई पढ़कर इस बात का अच्छी तरह पता चलता है कि इसका कारण यह है कि हमारी शिक्षा निकम्मी होती है और फिजूल होती है और विद्यार्थी युवा जगत अपने देश की बातों में कोई हिस्सा नहीं लेता । उन्हें इस संबंध में कोई भी ज्ञान नहीं होता । जब वे पढ़कर निकलते हैं तब उनमें से कुछ ही आगे पढ़ते हैं, लेकिन वे ऐसी कच्ची-कच्ची बातें करते हैं कि सुनकर स्वयं ही अफसोस कर बैठ जाने के सिवाय कोई चारा नहीं होता । जिन नौजवानों को कल देश की बागडोर हाथ में लेनी है, उन्हें आज ही अक्ल के अंधे बनाने की कोशिश की जा रही है । इससे जो परिणाम निकलेगा वह हमें खुद ही समझ लेना चाहिए । यह हम मानते हैं कि विद्यार्थियों का मुख्य काम पढ़ाई करना है, उन्हें अपना पूरा ध्यान उस ओर लगा देना चाहिए लेकिन क्या देश की परिस्थितियों का ज्ञान और उनके सुधार के उपाय सोचने की योग्यता पैदा करना उस शिक्षा में शामिल नहीं ? यदि नहीं तो हम उस शिक्षा को भी निकम्मी समझते हैं जो सिर्फ क्लर्की करने के लिए ही हासिल की जाए । ऐसी शिक्षा की जरूरत ही क्या है ? कुछ ज्यादा चालाक आदमी यह कहते हैं –''काका, तुम पॉलिटिक्स के अनुसार पढ़ो और सोचो जरूर, लेकिन कोई व्यावहारिक हिस्सा न लो । तुम अधिक योग्य होकर देश के लिए फायदेमंद साबित होगे ।''

बात बड़ी सुंदर लगती है, लेकिन हम इसे भी रद्द करते हैं, क्योंकि यह भी सिर्फ ऊपरी बात है । इस बात से यह स्पष्ट हो जाता है कि एक दिन विद्यार्थी एक पुस्तक 'अपील टू द यंग, प्रिंस क्रोपोट्किन'

पढ़ रहा था । एक प्रोफेसर साहब कहने लगे, यह कौन सी पुस्तक है ? और यह तो किसी बंगाली का नाम जान पड़ता है । लड़का बोल पड़ा– "प्रिंस क्रोपोटकिन का नाम बड़ा प्रसिद्ध है । वे अर्थशास्त्र के विद्वान थे ।" इस नाम से परिचित होना प्रत्येक प्रोफेसर के लिए बड़ा जरूरी था । प्रोफेसर की 'योग्यता' पर लड़का भी हँस पड़ा । और उसने फिर कहा– "ये रूसी सज्जन थे ।" बस ! 'रूसी' कहर टूट पड़ा । प्रोफेसर ने कहा कि "तुम बोल्शेविक हो, क्योंकि तुम पोलिटिकल पुस्तकें पढ़ते हो ।"

देखिए आप प्रोफेसर की योग्यता । अब उन बेचारे विद्यार्थियों को उनसे क्या सीखना है ? ऐसी स्थिति में वे नौजवान क्या सीख सकते हैं ?

दूसरी बात यह है कि व्यावहारिक राजनीति क्या होती है ? महात्मा गाँधी, जवाहरलाल नेहरू और सुभाषचंद्र बोस का स्वागत करना और भाषण सुनना तो हुई व्यावहारिक राजनीति, पर कमीशन या वाइसराय का स्वागत करना क्या हुआ ? क्या वह पॉलिटिक्स का दूसरा पहलू नहीं ? सरकारों और देशों के प्रबंध से संबंधित कोई भी बात पॉलिटिक्स के मैदान में ही गिनी जाएगी, तो फिर यह भी पॉलिटिक्स हुई कि नहीं ? कहा जाएगा कि इससे सरकार खुश होती है और दूसरी से नाराज ? फिर सवाल तो सरकार की खुशी या नाराजगी का ही हुआ । क्या विद्यार्थियों को जनमते ही खुशामद का पाठ पढ़ाया जाना चाहिए ? हम जो समझते हैं कि जब तक हिंदुस्तान में विदेशी डाकू नहीं, पशु हैं, पेट के गुलाम हैं तो हम किस तरह कहें कि विद्यार्थी वफादारी का पाठ पढ़ें ।

सभी मानते हैं कि हिंदुस्तान को इस समय ऐसे देशसेवकों की जरूरत है, जो तन-मन-धन देश पर अर्पित कर दें और पागलों की तरह सारी उम्र देश की आजादी के लिए न्यौछावर कर दें । लेकिन क्या बूढ़ों में ऐसे आदमी मिल सकेंगे ? क्या परिवार और दुनियादारी के झंझटों में फँसे सयाने लोगों में से ऐसे लोग निकल सकेंगे ? यह तो वही नौजवान निकल सकते हैं जो किन्हीं जंजालों में न फँसे हों और जंजालों में पड़ने से पहले विद्यार्थी या नौजवान तभी सोच सकते हैं यदि उन्होंने कुछ व्यावहारिक ज्ञान भी हासिल किया हो । सिर्फ गणित और ज्योग्राफी का ही परीक्षा के पर्चों के लिए घोंटा न लगाया हो ।

क्या इंग्लैंड के सभी विद्यार्थियों का कॉलेज छोड़कर जर्मनी के खिलाफ लड़ने के लिए निकल पड़ना पॉलिटिक्स नहीं थी ? तब हमारे उपदेशक कहाँ थे जो उनसे कहते–जाओ, जाकर शिक्षा हासिल करो। आज नेशनल कॉलेज, अहमदाबाद के जो लड़के सत्याग्रह में बारदोली वालों की सहायता कर रहे हैं, क्या वे ऐसे ही मूर्ख रह जाएँगे ? सभी देशों को आजाद करवाने वाले वहाँ के विद्यार्थी और नौजवान ही हुआ करते हैं । क्या हिंदुस्तान के नौजवान अलग-अलग रहकर अपना और अपने देश का अस्तित्व बचा पाएँगे ? नौजवान 1919 में विद्यार्थियों पर किए अत्याचार भूल नहीं सकते । वे यह भी समझते हैं कि उन्हें एक भारी क्रांति की जरूरत है । वे पढ़ें । जरूर पढ़ें । साथ ही पॉलिटिक्स का भी ज्ञान हासिल करें और जब जरूरत हो तो मैदान में कूद पड़ें और अपना जीवन इसी काम में लगा दें । अपने प्राणों का इसी में उत्सर्ग कर दें । वरन् बचने का कोई उपाय नजर नहीं आता ।

❑❑❑

सुखदेव के नाम पत्र

प्रिय भाई,

मैंने आपके पत्र को कई बार ध्यानपूर्वक पढ़ा । मैं अनुभव करता हूँ कि बदली हुई परिस्थितियों ने हम पर अलग-अलग प्रभाव डाला है । जिन बातों से जेल के बाहर घृणा करते थे, वे आपके लिए अब अनिवार्य हो चुकी हैं । इसी प्रकार मैं जेल से बाहर जिन बातों का विशेष रूप से समर्थन करता था, वे अब मेरे लिए विशेष महत्त्व नहीं रखतीं । उदाहरणार्थ, मैं व्यक्तिगत प्रेम को विशेष रूप से माननेवाला था, परंतु अब इस भावना का मेरे हृदय एवं मस्तिष्क में कोई विशेष स्थान नहीं रहा । बाहर आप इसके कड़े विरोधी थे, परंतु इस संबंध में अब आपके विचारों में भारी परिवर्तन एवं क्रांति आ चुकी है । आप इसे मानव जीवन का एक अत्यंत आवश्यक एवं अनिवार्य अंग अनुभव करते हैं और सहानुभूति से आपको एक प्रकार का आनंद भी प्राप्त हुआ है ।

आपको याद होगा कि एक दिन मैंने आत्महत्या के विषय में आपसे चर्चा की थी । तब मैंने आपको बताया था, कई परिस्थितियों में आत्महत्या उचित हो सकती है, परंतु आपने मेरे दृष्टिकोण का विरोध किया था । मुझे उस चर्चा का समय एवं स्थान भली प्रकार याद है । हमारी यह बात शहंशाही कुटिया में शाम के समय हुई थी । आपने मजाक के रूप में हँसते हुए कहा था कि इस प्रकार की कायरता का कार्य कभी उचित नहीं माना जा सकता । आपने कहा था कि इस प्रकार का कार्य भयानक और घृणित है, परंतु इस विषय पर भी मैं देखता हूँ कि आपकी राय बिलकुल बदल चुकी है । अब आप उसे कुछ अवस्थाओं में न केवल उचित, वरन् अनिवार्य एवं आवश्यक अनुभव करते हैं । मेरी इस विषय में अब वही राय है, जो पहले आपकी थी, अर्थात आत्महत्या एक घृणित अपराध है, यह पूर्णतः कायरता का कार्य है । क्रांतिकारी का तो कहना ही क्या, कोई भी मनुष्य ऐसे कार्य को उचित नहीं ठहरा सकता है ।

आप कहते हैं कि आप यह नहीं समझ सके कि केवल कष्ट सहन करने से आप अपने देश की सेवा किस प्रकार कर सकते हैं । आप जैसे व्यक्ति की ओर से ऐसा प्रश्न करना बड़े आश्चर्य की बात है, क्योंकि नौजवान भारत सभा के ध्येय 'सेवा द्वारा कष्टों को सहन करना एवं बलिदान करना' को हमने सोच-समझकर कितना प्यार किया था । मैं यह समझता हूँ कि आपने अधिक से अधिक संभव सेवा की । अब वह समय है कि जो कुछ आपने किया है, उसके लिए कष्ट उठाएँ । दूसरी बात यह है कि यही वह अवसर है जब आपको सारी जनता का नेतृत्व करना है ।

मानव किसी भी कार्य को उचित मानकर ही करता है, जैसे कि हमने लेजिस्लेटिव असेंबली में

बम फेंकने का कार्य किया था । कार्य करने के पश्चात उसका परिणाम और उसका फल भोगने की बारी आती है । क्या आपका यह विचार है कि यदि हमने दया के लिए गिड़गिड़ाते हुए दंड से बचने का प्रयत्न किया होता, तो हमारा यह कार्य उचित होता ? नहीं, इसका प्रभाव लोगों पर उल्टा होता । अब हम अपने लक्ष्य में पूर्णतया सफल हुए हैं ।

बंदी होने के समय हमारी संस्था के राजनीतिक बंदियों की दशा अत्यंत दयनीय थी । हमने उसे सुधारने का प्रयास आरंभ कर दिया । मैं आपको पूरी गंभीरता से बताता हूँ कि हमें यह विश्वास था कि हम बहुत कम समय के भीतर ही मर जाएँगे । हमें उपवास की स्थिति में कृत्रिम रीति से भोजन दिए जाने का न तो ज्ञान ही था, न हमें यह विचार सूझता ही था । हम तो मृत्यु के लिए तैयार थे । क्या आपका यह अभिप्राय है कि हम आत्महत्या करना चाहते थे ? नहीं, प्रयत्नशील होना एवं श्रेष्ठ और उत्कृष्ट आदर्श के लिए जीवन दे देना कदापि आत्महत्या नहीं कही जा सकती । हमारे मित्र (श्री यतींद्रनाथ दास) की मृत्यु तो स्पृहणीय है । क्या आप इसे आत्महत्या कहेंगे ? हमारा कष्ट सहन करना फलीभूत हुआ । समस्त देश में एक विराट और सर्वव्यापी आंदोलन शुरू हो गया । हम अपने लक्ष्य में सफल हुए । इस प्रकार के संघर्ष में मरना एक आदर्श मृत्यु है ।

इसके अतिरिक्त हम में से जिन लोगों को यह विश्वास है कि उनको मृत्युदंड दिया जाएगा, उनको धैर्यपूर्वक उस दिन की प्रतीक्षा करनी चाहिए जब यह सजा सुनाई जाएगी और तत्पश्चात उन्हें फाँसी दी जाएगी । यह मृत्यु भी सुंदर होगी, परंतु आत्महत्या करना, केवल कुछ दुखों से बचने के लिए अपने जीवन को समाप्त कर देना तो कायरता है । मैं आपको बताना चाहता हूँ कि विपत्तियाँ व्यक्ति को पूर्ण बनाने वाली होती हैं । मैं और आप, वरन् मैं कहूँगा, हम में से किसी ने भी किंचित कष्ट सहन नहीं किया है । हमारे जीवन का यह भाग तो अभी आरंभ होता है ।

आपको यह याद होगा कि अनेक बार इस विषय पर हमने बातचीत की है । रूसी साहित्य के प्रत्येक स्थान पर जो वास्तविकता मिलती है, वह हमारे साहित्य में कदापि नहीं दिखाई देती । हम उनकी कहानियों में कष्टों और दुखमयी स्थितियों को बहुत पसंद करते हैं, परंतु कष्ट सहन की उस भावना को अपने भीतर अनुभव नहीं करते । हम उनके उन्माद और उनके चरित्र की असाधारण ऊँचाइयों के प्रशंसक हैं, परंतु इसके कारणों पर सोच-विचार करने की कभी चिंता नहीं करते । मैं कहूँगा कि केवल विपत्तियाँ सहन करने के साहित्य के उल्लेख ने ही उन कहानियों में सहृदयता, दर्द की गहरी टीस और उनके चरित्र तथा साहित्य में ऊँचाई उत्पन्न की है । हमारी दशा उस समय दयनीय और हास्यास्पद हो जाती है, जब हम अपने जीवन में अकारण ही रहस्यवाद प्रविष्ट कर लेते हैं, यद्यपि इसके लिए कोई प्राकृतिक या ठोस आधार नहीं होता । हमारे जैसे व्यक्तियों को, जो प्रत्येक दृष्टि से क्रांतिकारी होने का गर्व करते हैं, सदैव हर प्रकार से उन विपत्तियों, चिंताओं, दुखों और कष्टों को सहन करने के लिए तत्पर रहना चाहिए जिनको हम स्वयं आरंभ किए संघर्ष के द्वारा आमंत्रित करते हैं एवं जिनके कारण हम अपने आपको क्रांतिकारी कहते हैं ।

मैं आपको बताता हूँ कि जेलों में और केवल जेलों में ही कोई व्यक्ति अपराध एवं पाप जैसे महान सामाजिक विषय का प्रत्यक्ष अध्ययन करने का अवसर पा सकता है । मैंने इस विषय का कुछ साहित्य

पढ़ा है और जेलें ही ऐसे विषयों का स्वाध्याय करने के लिए सबसे अधिक उपयुक्त स्थान हैं । स्वाध्याय का सर्वश्रेष्ठ भाग है–स्वयं कष्टों को सहना ।

आप भली प्रकार जानते हैं कि रूस में राजनीतिक बंदियों का बंदीगृहों में विपत्तियाँ सहन करना ही जारशाही का तख्ता उलटने के पश्चात उनके द्वारा जेलों के प्रबंध में क्रांति लाए जाने का सबसे बड़ा कारण था । क्या भारत को ऐसे व्यक्तियों की आवश्यकता नहीं है, जो इस विषय से पूर्णतया परिचित हों और इस समस्या का निजी अनुभव रखते हों । केवल यह कह देना कि दूसरा कोई इस काम को कर लेगा या इस कार्य को करने के लिए बहुत लोग हैं, किसी प्रकार भी उचित नहीं कहा जा सकता । इस प्रकार जो लोग क्रांतिकारी क्षेत्र के कार्यों का भार दूसरे लोगों पर छोड़ने को अप्रतिष्ठापूर्ण एवं घृणित समझते हैं, उन्हें पूरी लगन के साथ वर्तमान व्यवस्था के विरुद्ध संघर्ष आरंभ कर देना चाहिए । उन्हें चाहिए कि वे उन विधियों का उल्लंघन करें, परंतु उन्हें औचित्य का ध्यान रखना चाहिए, क्योंकि अनावश्यक एवं अनुचित प्रयत्न कभी भी न्यायपूर्ण नहीं माना जा सकता । इस प्रकार का आंदोलन क्रांति के कार्यकाल को बहुत सीमा तक कम कर देगा । जितने आंदोलन अब तक आरंभ हुए हैं, उन सबसे पृथक रहने के लिए आपने जो तर्क दिए हैं, मैं उन्हें समझने में असमर्थ हूँ । कुछ मित्र ऐसे हैं, जो या तो मूर्ख हैं या नासमझ । वे आपके इस व्यवहार को (जिसे वे स्वयं कहते हैं कि हमें किंचित भी नहीं समझ सकते, क्योंकि आप उनसे बहुत ऊँचे और उनकी समझ से बहुत परे हैं) अनोखा और अद्‌भुत समझते हैं ।

वास्तव में यदि आप यह अनुभव करते हैं कि बंदीगृह का जीवन वास्तव में अपमानपूर्ण है, तो आप उसके विरुद्ध आंदोलन करके उसे सुधारने का प्रयास क्यों नहीं करते ? संभवतया आप यह कहेंगे कि यह संघर्ष सफल नहीं हो सकता, परंतु यह तो वही तर्क है जिसकी आड़ लेकर साधारणतया निर्बल लोग प्रत्येक आंदोलन से बचना चाहते हैं । यह वह उत्तर है, जिसे हम उन लोगों से सुनते रहे हैं, जो जेल से बाहर क्रांतिकारी प्रयत्नों में सम्मिलित होने से जान बचाना चाहते थे । क्या आज यही उत्तर मैं आपके मुख से सुनूँगा ? कुछ मुट्ठी भर कार्यकर्ताओं के आधार पर संगठित हमारी पार्टी अपने लक्ष्यों और आदर्शों की तुलना में क्या कर सकती थी ? क्या हम इससे यह निष्कर्ष निकालें कि हमने इस काम के प्रारंभ करने में नितांत भूल की है ? नहीं, इस प्रकार का परिणाम निकालना उचित नहीं होगा । इससे तो उस व्यक्ति की भीतरी निर्बलता प्रकट होती है जो इस प्रकार सोचता है ।

आगे चलकर आप लिखते हैं कि चौदह वर्ष बंदीगृह के कष्टों से भरपूर जीवन बिताने के पश्चात किसी व्यक्ति से यह आशा नहीं की जा सकती कि उस समय भी उसके विचार वही होंगे, जो जेल से पूर्व थे, क्योंकि जेल का वातावरण उसके समस्त विचारों को रौंदकर रख देगा । क्या मैं आपसे पूछ सकता हूँ कि क्या जेल से बाहर का वातावरण हमारे विचारों के अनुकूल था ? फिर भी असफलताओं के कारण क्या हम उसे छोड़ सकते थे ? क्या आपका आशय यह है कि यदि हम इस क्षेत्र में न उतरे होते, तो कोई भी क्रांतिकारी कार्य कदापि नहीं हुआ होता ? यदि ऐसा है तो आप भूल कर रहे हैं । यद्यपि यह ठीक है कि हम भी वातावरण को बदलने में बड़ी सीमा तक सहायक सिद्ध हुए हैं, तथापि हम तो केवल अपने समय की आवश्यकता की उपज हैं ।

मैं तो यह कहूँगा कि साम्यवाद का जन्मदाता मार्क्स, वास्तव में इस विचार को जन्म देने वाला नहीं

था । असल में यूरोप की औद्योगिक क्रांति ने ही एक विशेष प्रकार के विचारों वाले व्यक्ति उत्पन्न किए थे । उनमें मार्क्स भी एक था । हाँ, अपने स्थान पर मार्क्स भी निस्संदेह कुछ सीमा तक समय के चक्र को एक विशेष प्रकार की गति देने में आवश्यक सहायक सिद्ध हुआ है ।

मैंने (और आपने भी) इस देश में समाजवाद और साम्यवाद के विचारों को जन्म नहीं दिया, वरन् यह तो हमारे ऊपर हमारे समय एवं परिस्थिति के प्रभाव का परिणाम है । निस्संदेह हमने इन विचारों का प्रचार करने के लिए कुछ साधारण एवं तुच्छ कार्य अवश्य किया है, इसलिए मैं कहता हूँ कि जब हमने इस प्रकार एक कठिन कार्य को हाथ में लिया है, तो हमें उसे जारी रखना चाहिए और आगे बढ़ना चाहिए । विपत्तियों से बचने के लिए आत्महत्या कर लेने से जनता का मार्गदर्शन नहीं होगा, वरन् यह तो एक प्रतिक्रियावादी कार्य होगा ।

जेल के नियमों के अनुसार जीवन की निराशाओं, दबाव और हिंसा के असीम परीक्षायुक्त वातावरण का विरोध करते हुए हम कार्य करते रहे । जिस समय हम अपना कार्य करते थे, उस समय नाना प्रकार से हमें कठिनाइयों का निशाना बनाया जाता था । यहाँ तक कि जो लोग अपने आपको महान क्रांतिकारी कहने का गौरव अनुभव करते थे, वे भी हमको छोड़ गए । क्या ये परिस्थितियाँ असीम परीक्षायुक्त न थीं ? फिर अपने आंदोलन एवं प्रयासों को जारी रखने के लिए हमारे पास क्या कारण और तर्क था ?

क्या स्वयं यही तर्क हमारे विचारों को शक्ति नहीं देता है ? और क्या ऐसे क्रांतिकारी कार्यकर्ताओं के उदाहरण हमारे सामने नहीं हैं जो जेलों से दंड भोग कर लौटे और अब भी कार्य कर रहे हैं ? यदि वाकुनिन ने आपके समान सोच-विचार किया होता, तो वह प्रारंभ में ही आत्महत्या कर लेता । आज आपको ऐसे असंख्य क्रांतिकारी दिखाई देते हैं, जो रूसी राज्य में उत्तरदायी पदों पर विराजमान हैं और जिन्होंने अपने जीवन का अधिकतर भाग दंड भोगते हुए जेलों में बिताया है । मनुष्य को अपने विश्वासों पर दृढ़तापूर्वक अडिग रहने का प्रयत्न करना चाहिए । कोई नहीं कह सकता कि भविष्य में क्या घटना होने वाली है ।

क्या आपको याद है कि जब हम इस विषय पर चर्चा कर रहे थे कि हमारी बम फैक्टरियों में अत्यंत तीव्र एवं प्रभावकारी विष भी रखा जाना चाहिए, तो आपने बड़ी दृढ़ता से इसका विरोध किया था । आप इस विचार से ही घृणा करते थे । आपको इस पर विश्वास नहीं था । फिर अब क्या हुआ ? यहाँ तो ऐसी विकट और जटिल परिस्थितियाँ भी नहीं हैं । मुझे तो इस प्रश्न पर विचार करने में भी घृणा होती है । आपको उस मनोवृत्ति से भी घृणा थी, जो आत्महत्या करने की अनुमति देती है । आप मुझे यह कहने के लिए क्षमा करें कि यदि आपने अपने बंदी बनाए जाने के समय ही इन विचारों के अनुकूल कार्य किया होता (अर्थात आपने विष खाकर उस समय आत्महत्या कर ली होती) तो आपने क्रांतिकारी कार्य की बहुत बड़ी सेवा की होती, परंतु इस समय तो इस कार्य पर विचार करना भी हमारे लिए हानिकारक है ।

एक और विशेष बात, जिस पर मैं आपका ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ, यह है कि हम लोग ईश्वर, पुनर्जन्म, नरक-स्वर्ग, दंड एवं पारितोषिक, अर्थात भगवान द्वारा किए जाने वाले जीवन के हिसाब आदि में कोई विश्वास नहीं रखते । अतः हमें जीवन एवं मृत्यु के विषय में भी नितांत भौतिकवादी रीति से सोचना चाहिए । एक दिन जब मुझे पहचाने जाने के लिए कोई दिल्ली से यहाँ लाया गया था, तो गुप्तचर विभाग के कुछ अधिकारियों ने मेरे पिताजी की उपस्थिति में मुझसे इस विषय पर बातचीत की थी । उन्होंने

कहा था कि मैं कोई भेद खोलने और इस प्रकार अपना जीवन बचाने के लिए तैयार नहीं हूँ, इससे सिद्ध होता है कि मैं जीवन से बहुत दुखी हूँ । उनका तर्क था कि मेरी यह मृत्यु तो आत्महत्या के समान होगी, परंतु मैंने उनको उत्तर दिया था कि मेरे जैसे विश्वास और विचारों वाला व्यक्ति व्यर्थ में मरना कदापि सहन नहीं कर सकता । हम तो अपने जीवन का अधिक से अधिक मूल्य प्राप्त करना चाहते हैं । हम मानवता की अधिक से अधिक संभव सेवा करना चाहते हैं । विशेषकर मेरे जैसा भला मनुष्य, जिसका जीवन किसी भी रूप में दुखी या चिंतित नहीं है, किसी समय भी आत्महत्या करना तो दूर रहा, उसका विचार भी हृदय में लाना ठीक नहीं समझता । वही बात मैं इस समय आपसे कहना चाहता हूँ ।

आशा है आप मुझे अनुमति देंगे कि मैं आपको यह बताऊँ कि मैं अपने बारे में क्या सोचता हूँ । मुझे अपने लिए मृत्युदंड सुनाए जाने का अटल विश्वास है । मुझे किसी प्रकार की पूर्ण क्षमा या नम्र व्यवहार की तनिक भी आशा नहीं है । यदि कोई क्षमा हुई भी तो पूर्णतः सबके लिए होगी, वरन् वह भी हमारे अतिरिक्त अन्य लोगों के लिए नितांत सीमित एवं कई बंधनों से जकड़ी हुई होगी । हमारे लिए न तो क्षमा हो सकती है और न वह होगी ही । इस पर भी मेरी इच्छा है कि हमारी मुक्ति का प्रस्ताव सम्मिलित रूप में और विश्वव्यापी हो और उसके साथ ही मेरी अभिलाषा यह है कि जब यह आंदोलन अपनी चरम सीमा पर पहुँचे तो हमें फाँसी दे दी जाए । मेरी यह इच्छा है कि यदि कोई सम्मानपूर्ण और उचित समझौता होना कभी संभव हो जाए, तो हमारे जैसे व्यक्तियों का मामला उसके मार्ग में कोई रुकावट या कठिनाई उत्पन्न करने का कारण न बने । जब देश के भाग्य का निर्णय हो रहा हो तो व्यक्तियों के भाग्य को पूर्णतया भुला देना चाहिए । हम क्रांतिकारी होने के नाते अतीत के समस्त अनुभवों से पूर्णतया अवगत हैं । इसलिए हम नहीं मान सकते कि हमारे शासकों और विशेषकर अंग्रेज जाति की भावनाओं में इस प्रकार का आश्चर्यजनक परिवर्तन उत्पन्न हो सकता है । इस प्रकार का परिवर्तन क्रांति के बिना संभव ही नहीं है । क्रांति तो केवल सतत कार्य करते रहने से, प्रयत्नों से, कष्ट सहन करने एवं बलिदानों से ही उत्पन्न की जा सकती है, और की जाएगी ।

जहाँ तक मेरे दृष्टिकोण का संबंध है, मैं तो केवल उसी दशा में सबके लिए सुविधाओं और क्षमादान का स्वागत कर सकता हूँ जब उसका प्रभाव स्थाई हो और देश के लोगों के हृदयों में हमारी फाँसियों से कुछ अमिट चिह्न अंकित हो जाएँ । बस यही; इससे अधिक कुछ नहीं ।

❑❑❑

अभ्यास

पाठ के साथ

1. विद्यार्थियों को राजनीति में भाग क्यों लेना चाहिए ?
2. भगत सिंह की विद्यार्थियों से क्या अपेक्षाएँ हैं ?
3. भगत सिंह के अनुसार 'केवल कष्ट सहकर भी देश की सेवा की जा सकती है ?' उनके जीवन के आधार पर इसे प्रमाणित करें ।

4. भगत सिंह ने कैसी मृत्यु को 'सुंदर' कहा है ? वे आत्महत्या को कायरता कहते हैं, इस संबंध में उनके विचारों को स्पष्ट करें ।
5. भगत सिंह रूसी साहित्य को इतना महत्त्वपूर्ण क्यों मानते हैं ? वे एक क्रांतिकारी से क्या अपेक्षाएँ रखते हैं ?
6. 'उन्हें चाहिए कि वे उन विधियों का उल्लंघन करें परंतु उन्हें औचित्य का ध्यान रखना चाहिए, क्योंकि अनावश्यक एवं अनुचित प्रयत्न कभी भी न्यायपूर्ण नहीं माना जा सकता ।' भगत सिंह के इस कथन का आशय बतलाएँ । इससे उनके चिंतन का कौन सा पक्ष उभरता है, वर्णन करें ।
7. निम्नलिखित कथनों का अभिप्राय स्पष्ट करें –
   (क) मैं आपको बताना चाहता हूँ कि विपत्तियाँ व्यक्ति को पूर्ण बनाने वाली होती हैं ।
   (ख) हम तो केवल अपने समय की आवश्यकता की उपज हैं ।
   (ग) मनुष्य को अपने विश्वासों पर दृढ़तापूर्वक अडिग रहने का प्रयत्न करना चाहिए ।
8. 'जब देश के भाग्य का निर्णय हो रहा हो तो व्यक्तियों के भाग्य को पूर्णतया भुला देना चाहिए ।' आज जब देश आजाद है, भगत सिंह के इस विचार का आप किस तरह मूल्यांकन करेंगे । अपना पक्ष प्रस्तुत करें ।
9. भगत सिंह ने अपनी फाँसी के लिए किस समय की इच्छा व्यक्त की है ? वे ऐसा समय क्यों चुनते हैं ?
10. भगत सिंह के इस पत्र से उनकी गहन वैचारिकता, यथार्थवादी दृष्टि का परिचय मिलता है । पत्र के आधार पर इसकी पुष्टि करें ।

पाठ के आस-पास

1. भगत सिंह ने 1926 में भगवतीचरण बोहरा आदि के साथ मिलकर 'नौजवान भारत सभा' का गठन किया था, आगे 1928 में चंद्रशेखर आजाद आदि के साथ मिलकर 'हिंदुस्तान समाजवादी प्रजातांत्रिक संघ' का गठन किया था, 'हिंदुस्तान समाजवादी प्रजातांत्रिक सेना' इसी का एक अंग थी जिसके कमांडर इन चीफ चंद्रशेखर आजाद थे । भगत सिंह और उनके साथियों के जीवन के विषय में जानकारी एकत्र करें और विद्यालय की गोष्ठी में इसे प्रस्तुत करें ।
2. भगत सिंह के इस पत्र से उनका गहन चिंतन प्रकट होता है, इसी तरह उन्होंने 'बम का दर्शन', 'मैं नास्तिक क्यों हूँ' जैसे कई विचारोत्तेजक लेख लिखे । आप इन लेखों को भी पढ़ें ।
3. भगत सिंह की कई चिट्ठियों में उनके भाव उमड़ पड़े हैं, ऐसा ही एक जज्बाती पत्र जो छोटे भाई कुलतार के लिए है, यहाँ दिया जा रहा है । आप इस पत्र को पढ़ें और मित्रों से चर्चा करें ।

छोटे भाई कुलतार के नाम अंतिम पत्र

सेंट्रल जेल, लाहौर
3 मार्च, 1931

अजीज कुलतार,

आज तुम्हारी आँखों में आँसू देखकर बहुत दुख हुआ । आज तुम्हारी बातों में बहुत दर्द था, तुम्हारे आँसू मुझसे सहन नहीं होते ।

बरखुर्दार, हिम्मत से शिक्षा प्राप्त करना और सेहत का ख्याल रखना । हौसला रखना और क्या कहूँ !

उसे यह फिक्र है हरदम नया तर्जे-जफा क्या है,
हमें यह शौक है देखें सितम की इंतहा क्या है ?
वहर से क्यों खफा रहें, चर्ख को क्यों गिला करें,
सारा जहाँ अदू सही, आओ मुकाबला करें ।

कोई दम का मेहमाँ हूँ ऐ अहले-महफिल
चरागे सहर हूँ बुझा चाहता हूँ
हवा में रहेगी मेरे ख्याल की बिजली,
ये मुश्ते खाक है फानी, रहे न रहे

अच्छा रुखसत । खुश रहो अहले-वतन, हम तो सफर करते हैं । हिम्मत से रहना ।

तुम्हारा भाई
भगत सिंह

4. पत्र-लेखन संवाद स्थापित करने का एक पुराना माध्यम है, आज नई तकनीकों एवं उपकरणों ने इसके प्रयोग को कम कर दिया है । इस विषय में आप क्या सोचते हैं, क्या हमें चिट्ठियों की जरूरत नहीं रही, क्या फोन-इंटरनेट आदि चिट्ठियों की जगह ले सकते हैं, अपना मत दें ।
5. हमारे देश के क्रांतिकारियों पर रूसी क्रांति और वहाँ के साहित्य का यथेष्ट प्रभाव पड़ा था । आपकी पुस्तक में संकलित अंतोन चेखव रूस के एक प्रमुख कथाकार थे । रूसी साहित्य के किन्हीं तीन अन्य लेखकों के संबंध में जानकारी प्राप्त करें ।
6. इनके बारे में शिक्षक से मालूम करें –
   बोल्शेविक, औद्योगिक क्रांति, यतींद्रनाथ दास, प्रिंस क्रोपोट्कीन ।

भाषा की बात

1. निम्नलिखित शब्दों के प्रत्यय निर्दिष्ट करें –
   कायरता, घृणित, पूर्णतया, दयनीय, स्पृहणीय, वास्तविकता, पारितोषिक
2. 'हास्यास्पद' शब्द में 'आस्पद' प्रत्यय है, इस प्रत्यय से पाँच अन्य शब्द बनाएँ ।
3. हमारे विद्यालय के प्राचार्य आ रहे हैं । इस वाक्य में 'हमारे विद्यालय के प्राचार्य' संज्ञा पदबंध है । वह पदसमूह जो वाक्य में संज्ञा का काम करे, संज्ञा पदबंध कहलाता है । इस तरह नीचे दिए गए वाक्यों से संज्ञा पदबंध चुनें –
   (क) बंदी होने के समय हमारी संस्था के राजनीतिक बंदियों की दशा अत्यंत दयनीय थी ।
   (ख) कुछ मुट्ठी भर कार्यकर्त्ताओं के आधार पर संगठित हमारी पार्टी अपने लक्ष्यों और आदर्शों की तुलना में क्या कर सकती थी ?
   (ग) मैं तो यह भी कहूँगा कि साम्यवाद का जन्मदाता मार्क्स, वास्तव में इस विचार को जन्म देने वाला नहीं था ।
4. पर्यायवाची शब्द लिखें –
   वफादारी, विद्यार्थी, फायदेमंद, खुशामद, दुनियादारी, अत्याचार, प्रतीक्षा, किंचित्
5. विपरीतार्थक शब्द लिखें –
   सयाना, उत्तर, निर्बलता, व्यवहार, स्वाध्याय, वास्तविक, अकारण

शब्द निधि :

स्पृहणीय	:	जिसकी कामना की जाए	नितांत	:	बिलकुल
फलीभूत	:	सफल, निष्कर्ष प्राप्त	पारितोषिक	:	पुरस्कार
सर्वव्यापी	:	हर जगह व्याप्त	फानी	:	विलुप्त हो जाने वाली